साहित्य, कला, संस्कृति, विज्ञान

मार्च -अप्रैल 2025

वीथिका ई पत्रिका

DOI: 10.528/zenodo.11063568

मन लेहु पै देहु छटांक नहीं

अंक : 17

W W W . V I T H I K A . O R G

वीथिका ई पत्रिका

संपादक मंडल

अर्चना उपाध्याय
प्रधान संपादक

चित्रा मोहन
मुख्य सलाहकार संपादक

सुमित उपाध्याय
प्रबंध संपादक

वीथिका परिवार

संरक्षक समिति
डॉ. बिपिन कुमार मिश्र
प्रो. प्रभाकर सिंह

वरिष्ठ सलाहकार संपादक
डॉ. आशुतोष तिवारी

वरिष्ठ सह संपादक
डॉ. सुधांशु लाल

वेब डिज़ाइन
रोशन भारती

प्रकाशक
उज्ज्वल उपाध्याय
यशिका फाउंडेशन, मऊ

संपादकीय समिति

डॉ अरुण कुमार सिंह
डॉ धनञ्जय शर्मा
श्री मनोज कुमार सिंह
एड. सत्यप्रकाश सिंह
श्री बृजेश गिरि
श्री नन्दलाल शर्मा

कवर पेज संपादक
अर्चिता उपाध्याय

कार्टून संपादक
कृतिका सिंह

सलाहकार परिषद
डॉ अखिलेश पाण्डेय
डॉ शिवमूरत यादव

UDYAM-UP 55 0010534

vithikaportal@gmail.com

www.vithika.org

वीथिका ई -पत्रिका

पत्रिका में छपे सभी लेख लेखक के अपने विचार हैं

अंक: 17

वीथिका ई पत्रिका

मार्च-अप्रैल, 2025

विषय सूची :

गलियों की बात 04

पहलगाम : श्रद्धांजलि 06

साहित्य वीथी

प्रेम इस समय : परिचय दास 07

रेशमी घास : विवेक कुमार मिश्र 14

प्रेम की समझ : जयप्रकाश नारायण मिश्र 17

शिवमय शक्ति : शक्तिमय शिव : रश्मि धारिणी धरित्री 19

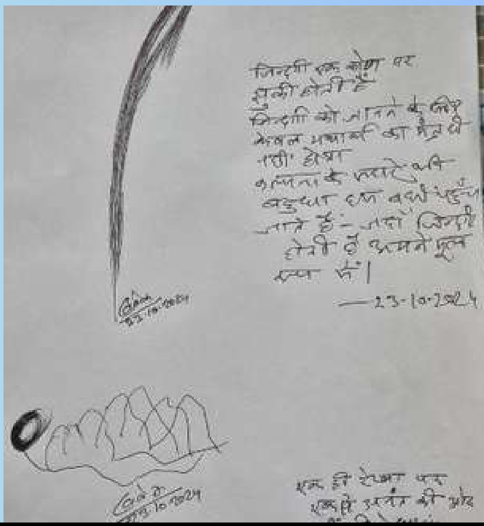

अनुवाद : KEEP QUIET डॉ एस.पी.सती 21

चित भूमियाँ : विवेक मिश्रा 22

सोंधी मिट्टी 23

वशिष्ठ अनूप, नमिता राकेश, डॉ.कमलेश राय. अजित कुमार राय, डॉ.अन्नपूर्णा श्रीवास्तव, विवेक मिश्रा, प्रतिमा सिंह, नीलम सरोज, डॉ.जय महलवाल, रश्मि धारिणी, आनंद विक्रम सिंह, रेणु सिंह राधे, शायरा बानो, घनश्याम कुमार, लवलेश दत्त, बृजेश गिरी, कामरान खान, जय श्री

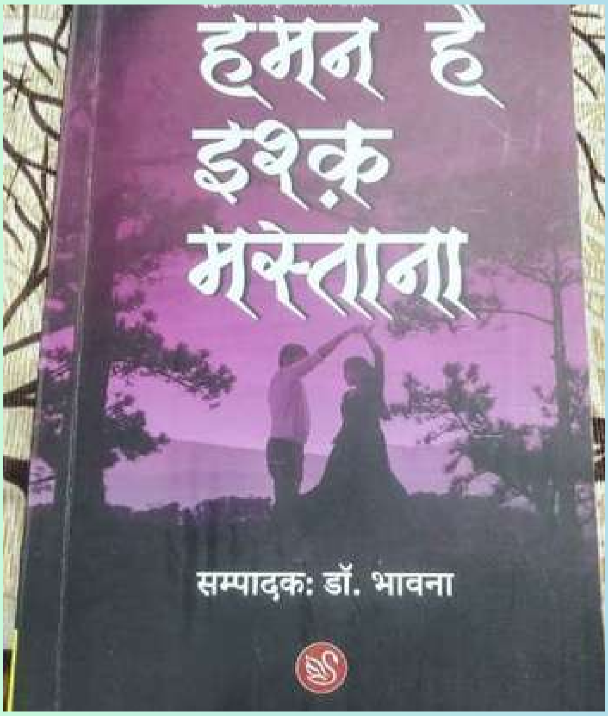

कथावीथी :

पैसे की कीमत : पियूष गोयल 39

आरोही : शायरा बानो 41

पुस्तक समीक्षा : हमन है इश्क मस्ताना डॉ. जियाउर रहमान जाफरी 43

कृतिका के कार्टून : कृतिका सिंह 45

Visit

WWW.VITHIKA.ORG

to download this current issue to your tablet

वीथिका ई पत्रिका

गलियों की बात

अर्चना उपाध्याय
प्रधान संपादक

वीथिका ई पत्रिका परिवार कश्मीर के पहलगाम में शहीद हुए भारतीय सपूतों को शत-शत नमन करता है । इस घटना ने समूचे देश को झकझोर कर रख दिया है । हमारी भारतीय चिन्तन परंपरा में प्रेम को जीवन का महत्वपूर्ण पहलू माना जाता है, यह प्रेम की भावना को आत्मा व परमात्मा के बीच एकाकार स्वरुप में दर्शाता है। हम घृणा के किसी भी रूप को किसी भी स्तर पर नकार देते हैं । अतीत में भक्ति आंदोलन ने भी प्रेम की महत्ता व पवित्रता को स्थान दिया, हमारे संतों ने प्रेम को भगवान के प्रति समर्पण माना है। उदाहरणस्वरुप कबीर दास जैसे महान कवि व संत ने अपनी वाणी से प्रेम व भक्ति के मार्ग पर चलकर समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास किया ।तुलसीदास जी, मीराबाई आदि संत कवियों ने तो प्रेम के द्वारा समूची ज्ञान परम्परा का निर्माण किया और समय-समय पर उसे सुरक्षित भी किया । हमारे प्रभु श्री कृष्ण जब प्रेममय हैं तो लोकरंजक हैं और जब उन्हें लगता है कि अब लोक संकट में है तो वो लोक रक्षक भी बन जाते हैं । यही प्रेम की मूल शक्ति है ।

प्रेम पर लिखना-बोलना वो भी शब्दों की सीमा में असम्भव है । इसका विस्तार आसमान की तरह व्यापक, पृथ्वी की तरह अथाह व अनन्त है। प्रेम के मूल तत्व में सर्वप्रथम निःस्वार्थ होना प्रथम पहचान है तथा करुणा, विश्वास, समर्पण, सहानुभूति ऐसे मूल तत्व हैं जो प्रेम के महत्व को दर्शाने में, प्रेम में इन्सान बनने की राह प्रशस्त करते हैं।

पारिवारिक सम्बन्धों का प्रेम सुरक्षा और समर्थन की भावना को इतना अधिक मजबूत करता है कि हमारे भीतर एक-दूसरे के प्रति एकता, सहयोग, कर्तव्य के

लिए प्रतिबद्धता आती है। पारिवारिक प्रेम मानव को भावनात्मक रुप से सबल करता है जिससे सभी सहानुभूति व समझ के साथ मानवीय मूल्यों व आदर्शों का पालन करने में सफल होते हैं।
प्रेम में हिंसा, अपराध, अलगाव के लिए जगह है ही नहीं। यह एक सकारात्मक और निर्माणात्मक भावना है जो मनुष्य को मनुष्यता के गुणों से समृद्ध कर एक ऐसा इन्सान बनने में मदद करती है जहां समस्त वेश,भाषा, बोली, विचार, व्यवहार, धर्म, पंथ के लिए केवल प्रेम ही प्रेम है ।
सौभाग्य कहें तो हमारे नदियों, पर्वतों, झीलों, झरनों के कण-कण में बसा प्रेम हमारे देश की सीमा लांघ कर भी डगमगाता नहीं वरन अप्रतिम उदाहरण बन जाता है। आज का दुर्भाग्य देखें तो कुछ अमानवीय विचार, बुद्धिहीन, भटकाव, अलगाव की प्रवृति वाले विकृत साधन, संसाधन के वशीभूत होकर मानवता को शर्मशार कर रहे हैं। चाहे साहित्य का क्षेत्र हो अथवा आध्यात्म का, परिवार की गरिमा हो अथवा सम्बन्धों की सुन्दरता, रिश्तों की गहराई तक में स्वार्थलोलुपता, छल, विद्रूपता,विकृति, हिंसा ने ऐसी कुरुपता दिखाई है जिससे कि आए दिन मानवता शर्मशार होती जा रही है। पहलगाम में घटी नृशंस,घृणित हत्या हो अथवा आए दिन सम्बन्धों में छल की घटनाएं हों सबने हमारे साहित्यिक, आध्यात्मिक, पारिवारिक, मानवीय प्रेम पर हमला बोल दिया है । ऐसी स्थिति से निपटने के लिए प्रेम के मूल तत्व को पुनः स्थान दिलाने हेतु, प्रेम के राह पर चलकर यकीन दिलाने के लिए हम-आप-सबको अपनी समस्त विधाओं सहित इसपरिस्थिति का सामना करना है।

पहलगाम

22 अप्रैल, 2025

अ श्रु पू र्ण श्र द्धां ज लि

स म स्त भा र त वा सी

प्रेम : इस समय में

प्रेम अब प्रतीकों में बोलता है—कभी ऑनलाइन स्टेटस में 'last seen' बनकर, कभी 'is typing' में लटके रहकर, कभी घंटों की 'do not disturb' के पीछे से झाँककर। मगर इन डिजिटल जालों के भीतर भी, अगर कोई सच बचा रह गया है तो वह है—किसी का इंतज़ार।

परिचय दास

प्रोफेसर, नव नालंदा महाविहार विश्वविद्यालय
(संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार), नालन्दा
मोबाइल- 9968269237
ई मेल-parichaydass@rediffmail.com

।। एक ।।

प्रेम कोई निर्णय नहीं, कोई विचार नहीं, कोई निष्कर्ष नहीं—वह तो बस बहती हुई एक साँझ है जो किसी अज्ञात दिशा से चली आती है और तुम्हारे भीतर उतर जाती है, जैसे कोई मधुर रोशनी धीरे-धीरे तुम्हारे मन की खोहों को आलोकित कर दे। वह कहीं भी हो सकता है—पलकों की थरथराहट में, किसी चुप्पी के पीछे, किसी आकुल प्रतीक्षा के क्षण में या किसी स्मृति की हल्की सी चुभन में। प्रेम अकस्मात आता है पर जब आता है तो जीवन का सारा गणित उलट देता है। वह कोई प्रस्ताव नहीं रखता, कोई तर्क नहीं देता, कोई उत्तर नहीं माँगता। वह सिर्फ़ उपस्थित हो जाता है, तुम्हारे होने में, तुम्हारे सोचने में, तुम्हारे साँस लेने में

और फिर जो कुछ भी होता है, वह प्रेम के आलोक में होता है। कभी वह उस पहली दृष्टि की तरह होता है, जब कोई किसी मेले में भीड़ के बीच अचानक दिख जाता है और फिर सब कुछ स्थिर हो जाता है—भीड़, शोर, ध्वनि—बस एक चेहरा दीप्त होता है तुम्हारे सम्पूर्ण अस्तित्व में। तुम जानते नहीं कि क्यों पर जानते हो कि यह वही है, जिसे देखे बिना भी तुम जान चुके थे।

प्रेम की भाषा अलग होती है—वह मौन में अधिक बोलता है। वह आँखों से सुनता है और स्पर्श से कहता है। वह हर उस जगह छिपा होता है जहाँ शब्द असमर्थ हो जाते हैं। जब तुम किसी की अनुपस्थिति में उसकी उपस्थिति को और अधिक महसूस करते हो तब प्रेम होता है। जब कोई किसी कविता की तरह तुम्हारे भीतर गूंजता है, बिना किसी तुक के, तब प्रेम होता है। प्रेम में समय स्थिर हो जाता है। एक क्षण फैलकर अनंत हो जाता है। उस क्षण में तुम्हें भविष्य का भय नहीं होता, अतीत की ग्लानि नहीं होती। केवल वह एक जीवंत क्षण होता है, जिसमें तुम सम्पूर्ण होते हो और उस सम्पूर्णता में कोई अभाव नहीं होता। प्रेम कभी पूर्ण नहीं होता और शायद उसकी यही अपूर्णता उसे इतना विराट बना देती है। वह अपने अधूरेपन में ही सम्पूर्ण लगता है, जैसे किसी पहाड़ी नदी की अधूरी कहानी, जो बहती जा रही है पर नहीं जानती कि वह किनारे तक पहुँचेगी या नहीं। कभी-कभी प्रेम तुम्हें खो देने आता है जैसे कोई पुरानी चिट्ठी जो तुमने बरसों से सँभाल रखी थी, अचानक किसी बरसाती हवा में उड़ जाए और तुम बस उसकी गंध को याद करते रहो। लेकिन प्रेम की यही उड़ान है—वह किसी बाँध में नहीं रुकता।

प्रेम कोई धर्म नहीं, कोई अनुशासन नहीं। वह स्वतंत्रता का दूसरा नाम है। जब तुम प्रेम में होते हो, तुम सबसे अधिक स्वतन्त्र होते हो और सबसे अधिक बंधे भी। वह एक ऐसा बन्धन है जो पंख देता है; वह एक ऐसी गिरफ़्त है जो आकाश देती है। वह जब आता है तो तुम्हें भीतर से खोलता है—तुम्हारे भय, तुम्हारी कठोरता, तुम्हारी सीमाएँ, सब कुछ पिघलने लगता है। तुम एक तरल मनुष्य बनते हो, भावनाओं की जलधारा में बहते हुए। कभी वह एक अधूरी कविता की तरह होता है जिसमें शब्द नहीं, केवल स्पर्श होते हैं। वह अधूरी होती है पर उसमें सम्पूर्ण भावनाएँ समाहित होती हैं। प्रेम कभी तुम्हारे भीतर किसी संगीत की तरह गूंजता है जो अनसुना है पर बहुत परिचित भी। वह कोई धुन नहीं, कोई वाद्य नहीं—वह तो केवल कंपन है, एक गुप्त ध्वनि जो केवल उसी को सुनाई देती है जो प्रेम में है। और प्रेम की पहचान क्या है? शायद यही कि तुम अपने भीतर किसी और की धड़कन को सुन पाओ या किसी और के भीतर अपने मौन को। प्रेम में तुम किसी को जीतते नहीं, तुम स्वयं को खोते हो। और यह खोना हार नहीं, मुक्ति है।

।। दो ।।

प्रेम किसी क्षण में नहीं समाता, वह क्षणों के आर-पार बहता है। वह उस पहली भोर की तरह होता है जब जीवन अपने सबसे नाजुक रंगों में रंगा होता है और कोई भी स्पर्श उसे खरोंच सकता है। प्रेम जब तुम्हारे भीतर उतरता है तब तुम्हारी दृष्टि बदल जाती है—तब तुम फूलों को सिर्फ़ फूल नहीं बल्कि किसी की आँखों की तरह देखने लगते हो; तब पत्तियों की सरसराहट किसी पुराने वादे की तरह लगती है; तब हवा में चलती धूल भी किसी चुप संवाद की तरह तुम्हें छूती है। प्रेम में तर्क का कोई स्थान नहीं। वह निर्णय की नहीं, समर्पण की भूमि है।

जब तुम प्रेम में होते हो तब तुम्हारा अस्तित्व किसी और की उपस्थिति में घुलने लगता है—तुम्हारी आवाज़ उसकी चुप्पी में, तुम्हारी तन्हाई उसकी मुस्कान में, तुम्हारी नींद उसके स्पर्श में। तुम नहीं जानते कि तुम क्यों इतने कोमल हो गए हो पर जानते हो कि यह कोमलता प्रेम का उपहार है। वह तुम्हें भीतर से बदल देता है, बिना किसी उद् घोष के। प्रेम कोई तूफ़ान नहीं जो दरवाज़ा तोड़ता हो; वह तो एक धीमी वर्षा की तरह है जो चुपचाप धरती में उतरती है और जब तुम चेतते हो तब पाते हो कि तुम्हारा मन हरियाली से भर गया है।

प्रेम वह मौन है जिसे शब्द छू नहीं सकते और वह स्पर्श है जिसे कोई बाहरी त्वचा पहचान नहीं सकती। वह एक भीतरी कंपन है जो तब भी तुम्हारे साथ होता है जब तुम अकेले होते हो। कभी वह एक उपस्थिति होता है जो तुम्हारे सामने है, तुम्हारे साथ है, तुम्हारे भीतर है और कभी वह अनुपस्थिति बनकर और अधिक उपस्थित हो जाता है—जैसे कोई प्रिय नाम जिसे पुकारे बिना भी तुम हर पल पुकारते हो।

प्रेम के पास लौटने का मार्ग नहीं होता। एक बार वह तुम्हें छू लेता है, तुम लौटते नहीं—तुम बदल जाते हो। और यह बदलाव कोई दिखावटी नहीं होता; यह भीतर के उस धागे को छूता है, जिससे तुम्हारा समूचा अस्तित्व बुना गया है।कभी प्रेम वह स्पर्श होता है जो हुआ नहीं पर जिसका एहसास जीवन भर बना रहता है। कभी वह वह वादा होता है जो कभी किया ही नहीं गया, फिर भी निभता चला जाता है, हर मौसम में, हर आँसू में, हर मुस्कान में।

प्रेम किसी उपलब्धि की वस्तु नहीं, वह कोई युद्ध नहीं, कोई विजय नहीं। वह तो बस एक ऐसी अनुभूति है जो तुम्हें अपने सबसे असुरक्षित रूप में स्वीकार करती है। वह तुम्हारे आँसुओं से नहीं डरती, तुम्हारे डर से नहीं भागती, तुम्हारी हार से घबराती नहीं। प्रेम, जब सच्चा होता है तो तुम्हें साधारण बनाता है—इतना साधारण कि तुम किसी कविता के शब्द हो सकते हो, किसी चित्र की रेखा हो सकते हो, किसी आँसुओं में चमकते नक्षत्र हो सकते हो। तुम प्रेम में जब होते हो, तब तुम सबसे अधिक ईश्वर के निकट होते हो—न धर्म में, न मंदिर में, न मंत्र में—बल्कि उस एक क्षण में जब तुम्हारी दृष्टि किसी और की आत्मा को छू जाती है।

प्रेम की कोई परिभाषा नहीं, केवल प्रतीतियाँ हैं और वे प्रतीतियाँ भी समय के साथ बदलती जाती हैं—कभी किसी पुकार में, कभी किसी विदा में, कभी किसी प्रतीक्षा में।

तब तुम समझते हो कि प्रेम कोई घटना नहीं, कोई कथा नहीं—वह एक यात्रा है जो शुरू होकर कभी समाप्त नहीं होती।

।। तीन।।

प्रेम उस क्षण भी जीवित रहता है जब सब कुछ समाप्त हो चुका होता है। वह किसी स्मृति की तरह लौटता है जो न कोई उत्तर माँगती है, न ही कोई शिकायत करती है। वह सिर्फ़ उपस्थित रहती है—जैसे किसी पुराने आँगन में ठहरी धूप जो अब भी तुम्हारे नाम से गरम है।

प्रेम, अपने सबसे सच्चे रूप में, कुछ खोने के बाद भी बचा रह जाता है। जब तुम प्रेम में होते हो, तो तुम्हारे भीतर एक अंतहीन प्रार्थना जन्म लेती है—वह बिना शब्दों के होती है, बिना इरादों के। वह केवल इस भाव से भरी होती है कि दूसरा सुखी रहे, भले ही तुम्हारे साथ न हो। यही वह जगह है जहाँ प्रेम, मोह से अलग हो जाता है; यही वह पल है जब प्रेम अपनी सबसे निर्मल अवस्था में प्रकट होता है।

तुम किसी की आँखों में डूबते हो और वहाँ अपनी ही गहराइयों से मिलते हो।

प्रेम तुम्हें तुम्हारे सबसे भीतर के सत्य से परिचित कराता है। वह केवल किसी और को जानने का माध्यम नहीं; वह स्वयं को जानने का सबसे कोमल और सबसे गहन रास्ता है।

कभी-कभी प्रेम बस इस रूप में होता है कि कोई तुम्हारे मौन को समझता है। कोई तुम्हारी बातों के बीच की चुप्पियों को पढ़ता है, तुम्हारी अधूरी बातों में तुम्हारा सम्पूर्ण सत्य सुन लेता है। वह कुछ नहीं माँगता, कुछ नहीं बदलता—सिर्फ़ तुम्हारे साथ खड़ा होता है, जैसे एक दीपक जो अंधेरे में टिमटिमा कर तुम्हें राह दिखाता है।

प्रेम में हर बिछड़ना संपूर्ण नहीं होता। कुछ बिछड़नें मिलन से अधिक गहरी होती हैं। कभी तुम किसी को छोड़कर चले जाते हो, लेकिन उसका नाम तुम्हारी साँसों में रह जाता है, उसकी आदतें तुम्हारे हावभाव में उतर आती हैं और उसकी दृष्टि तुम्हारे स्वप्नों में बस जाती है।

तुम कई बार प्रेम को भूल जाने का अभिनय करते हो पर प्रेम कभी तुम्हें नहीं भूलता।

वह तुम्हारी मुस्कान में, तुम्हारे हाथ के कंपन में, तुम्हारे अकेले क्षणों में लौट आता है—बिना आहट के, बिना इजाज़त माँगे।

प्रेम, जब असली होता है तो वह केवल शरीरों के बीच नहीं, आत्माओं के बीच होता है। वह किसी रंग या जाति, किसी दूरी या भाषा, किसी समय या परिस्थिति का बंधक नहीं होता। वह स्वतंत्र होता है—जैसे हवा, जैसे आकाश, जैसे कविता।

प्रेम तुम्हें सरल बनाता है—इतना सरल कि तुम किसी झील

की तरह हो जाते हो जो किसी पथिक की प्यास बुझाने को सदा तत्पर है, बिना यह पूछे कि वह कौन है, कहाँ से आया है।इस प्रेम में कभी-कभी तुम थक भी जाते हो, टूट भी जाते हो, जल भी उठते हो। पर फिर भी, तुम्हें कोई पछतावा नहीं होता क्योंकि प्रेम अपने साथ जीवन का सबसे वास्तविक अनुभव लेकर आता है।

प्रेम में तुम एक और आत्मा को नहीं, एक और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपनाते हो। उसकी हँसी तुम्हारी सुबह बनती है, उसका रुदन तुम्हारी रात। उसकी चुप्पी तुम्हारा संगीत और उसका चला जाना तुम्हारा सबसे निजी युद्ध। प्रेम तुम्हें अधूरा करके भी पूरा करता है।

।। चार ।।

समकालीन प्रेम में वह कुछ है जो तितली के पंखों पर लगे पराग-सा कोमल और कंप्यूटर स्क्रीन के चकाचौंध से उपजा एक बेचैन स्पर्श है। यह प्रेम कभी इनबॉक्स में उगता है, कभी ‘

टाइपिंग...' के तीन बिंदुओं में थिरकता है और कभी किसी अनजानी नींद में उभर आए किसी स्वप्न-सरीखा घटता है। प्रेम अब दृश्य हो गया है लेकिन उसकी अन्तर्ध्वनि पहले से कहीं अधिक अमूर्त, कहीं अधिक अदृश्य।

कभी वे प्रेम-पत्र होते थे जो महीनों बाद पहुँचते थे और एक शब्द को पढ़ते हुए पूरा जीवन बीत जाया करता था। अब तो प्रेम, चंद अक्षरों में 'seen' होकर ठहर जाता है। न प्रतीक्षा का सौंदर्य, न असहमति का सौम्य समय। सब कुछ तत्क्षण, सब कुछ तत्काल।

समकालीन प्रेम मानो गति की किसी अंधी नदी में बहती एक चप्पू-विहीन नाव हो—चलती है पर दिशा का अनुमान नहीं।

फिर भी प्रेम वहीं है। अपने सारे डिजिटल मेकअप के नीचे, अपने सारे स्टिकर और GIF के पीछे—वह आज भी उसी तरह धड़कता है जैसे कबीर की उलझी हुई पंक्तियों में, जैसे मीर की रुलाई में, जैसे अमृता के चुप हँसी में। वह आज भी हृदय के भीतर किसी अज्ञात स्वर को जन्म देता है, जिसे कोई और नहीं, केवल वही समझता है जिसे वह समर्पित हो।

समकाल में प्रेम एक विकल्प बन गया है—वह अब अनिवार्य नहीं, शायद आदत है, शायद सुविधा, शायद अकेलेपन से बच निकलने का एक तरीका। लेकिन, जब वह होता है, तब उसकी आंच वैसी ही होती है—धीमी, मद्धम, मगर भीतर तक पहुँचती हुई जो आज भी हमें उद्वेलित करती है, रुला देती है और एकांत की सबसे गहरी सतह पर हमारी प्रतीक्षा करती है।

कभी प्रेम को हम अपने साथ लेकर चलते हैं जैसे कोई ब्रीफकेस—काम के समय उसे मेज़ के नीचे रखते हैं, शाम को फिर खोलते हैं, कुछ चिट्ठियाँ पढ़ते हैं, कुछ शिकायतें निकालते हैं, कुछ क्षणों को स्मृति में दुबारा रखते हैं। आज का प्रेम व्यवस्थाओं से घिरा हुआ है—EMI, ऑनलाइन मीटिंग्स, करियर ग्रोथ और ट्रैफ़िक जाम के बीच भी वह साँस लेता है, कभी फुसफुसाता है, कभी बस मौन रहता है।

यह प्रेम का समकालीन चमत्कार है कि वह इतने प्रलोभनों, इतनी गति, इतनी तात्कालिकता के बावजूद कहीं न कहीं टिकता है, साँस लेता है,

अपनी जगह बनाता है। वह कभी फ़ोन की स्क्रीन बंद होने के बाद भी बाकी रहता है, कभी किसी वॉइस नोट में घुला हुआ, कभी किसी पुरानी फ़ोटो के पीछे से झाँकता हुआ।

प्रेम अब आग्रह नहीं करता, वह अनुकूलन करता है। वह नायक नहीं, एक उपस्थिति है—जैसे हवा का झोंका, जैसे आँखों का पानी, जैसे एक दबी हुई साँस। कभी वह नाम नहीं लेता, केवल साथ चलता है, कभी वह सामने नहीं आता, केवल उपस्थित रहता है।

फिर भी जब प्रेम में डूबे दो व्यक्ति एक-दूसरे की आवाज़ सुनते हैं, तब सब कुछ थम जाता है—वक्त, दुनिया, बंधन, भय, असुरक्षा। तब प्रेम पुराने युगों की भाँति एक राग बन जाता है—दीर्घ, मधुर, अतल।

तुम अगर आज प्रेम में हो तो तुम्हारे भीतर भी वही युद्ध है—भीतर से एक पूर्ण समर्पण और बाहर से एक सुरक्षित दूरी। आज के प्रेम में साहस कम नहीं हुआ, बस उसकी मुद्रा बदल गई है। वह सीधे कहना नहीं जानता, वह चुप रहकर भी पुकारता है।

यह समकाल, जिसमें सब कुछ टुकड़ों में बँटा हुआ है—समय, संवाद, स्पर्श, स्पेस—वहीं प्रेम अपने को एक संपूर्ण कथा की तरह रचता है। वह हमारे विखंडन में ही एकता की आशा करता है। वह इस गति में भी विश्राम की तलाश करता है। और हम, जो इस समय के जीव हैं—हम प्रेम को कभी समझने की कोशिश करते हैं, कभी उससे लड़ते हैं, और कभी उसे अपने एकांत में चुपचाप पालते रहते हैं।

हमें उसकी ज़रूरत है, भले ही हम यह दिखाएँ कि हम आत्मनिर्भर हैं।

प्रेम के इस समकाल में शायद यही सबसे बड़ी बात है—कि वह अब भी हमसे बाहर नहीं, भीतर होता जा रहा है। वह अब भी लिखे नहीं, जिए जाते हैं। वह अब भी कविता नहीं, जीवित अनुभव है।

॥ पाँच ॥

जब समय की छाती पर असंख्य योजनाएँ, सूचियाँ, डेडलाइन और अधूरी बातचीतें दर्ज हों, तब प्रेम एक ऐसा अक्षर है जो मिटाया नहीं जा सकता। वह अपनी सबसे सूक्ष्म आकृति में भी जीवित रहता है—कभी किसी व्यस्त दिनचर्या के बीच किसी प्रिय की याद में आ गए एकाएक ठहरे मौन में, कभी किसी पुराने लम्हे के दुबारा जिए जाने की चाह में। आज के समय में प्रेम कोई सार्वजनिक उद्घोषणा नहीं है, न ही कोई काव्यात्मक विलासिता।

यह प्रेम अक्सर एक लघु सांध्य छाया की तरह हमारे साथ चलता है, जो सूर्यास्त के समय लंबे होते हुए भी पहचान में नहीं आता। वह संवाद नहीं माँगता, बस उपस्थिति चाहता है। लोग अब प्रेम को एक 'प्रॉसेस' के रूप में देखने लगे हैं—किसी डेटिंग ऐप की प्रोफ़ाइल से शुरू होकर इंस्टाग्राम की कहानियों में विसर्जित हो जाने वाला लेकिन प्रेम वहाँ नहीं रुकता। वह अपनी राहें बनाता है—इन औपचारिकताओं से परे। कभी किसी की खामोशी में, कभी किसी की आंखों के कोर पर अटकी एक अदृश्य पीड़ा में। प्रेम समकाल में अब उतना स्पष्ट नहीं रहा जितना वह एक सदी पहले था।

वह अब प्रतीकों में बोलता है—कभी ऑनलाइन स्टेटस में 'last seen' बनकर, कभी 'is typing' में लटके रहकर, कभी घंटों की 'do not disturb' के पीछे से झाँककर। मगर इन डिजिटल जालों के भीतर भी, अगर कोई सच बचा रह गया है तो वह है—किसी का इंतज़ार।

प्रेम अब हठ नहीं करता, शायद अब वह आग्रह भी नहीं करता। वह बस धीरे-धीरे किसी छाया की तरह पास आता है और फिर हमारे भीतर ठहर जाता है। वह हमें चुपचाप बदलता है, हमारे चेहरे को, हमारे स्वर को, हमारी आकांक्षाओं को। वह हमें उस अव्यक्त की भाषा सिखाता है जो आज के सबसे तेज़ समय में भी पूरी तरह अपनी मौलिक लय में गाता है। समकालीन प्रेम के पास अब न वह लाज है, न ही वह विद्रोह।

वह अब तीसरे रास्ते पर है—जहाँ स्पर्श की जगह समझ है, जहाँ चिट्ठियों की जगह गूंज है, और जहाँ स्थायित्व की जगह क्षणिक परिपूर्णता है।

फिर भी प्रेम में एक आदिम आकांक्षा अब भी शेष है —किसी को पूरी तरह जान लेने की, और किसी के भीतर पूरी तरह खो जाने की। यह आकांक्षा, जितनी अनकही है, उतनी ही अटूट। आज के प्रेमी भले ही तिथियों और समयों को साझा करें लेकिन वे अब भी एक-दूसरे के स्वप्नों में बिना बुलाए आना चाहते हैं। प्रेम अब सीमाओं का अतिक्रमण नहीं करता, वह सीमाओं में बहना सीख गया है। वह अब उड़ान नहीं माँगता, वह हवा को पढ़ लेना चाहता है।

वह अब दूरियों से लड़ना नहीं चाहता, वह दूरी को अपनी ही भाषा में अनुवाद करना चाहता है।

जब कोई किसी को अचानक याद करता है और यह याद सिर्फ़ एक स्मृति नहीं, एक वर्तमान बन जाती है —वही प्रेम है। जब कोई किसी की आवाज़ की एक छोटी सी कंपन से पूरे दिन की थकान भूल जाता है —वही प्रेम है। जब एक चेहरा, एक नाम, एक भाव, पूरी दुनिया की हलचल से अधिक अपना लगने लगे —वही प्रेम है।

यह प्रेम, चाहे वह किसी भी समय में क्यों न हो, हमेशा समकालीन रहता है। वह अपने हर रूप में वर्तमान का साक्षात्कार करता है। प्रेम, जो किसी समय में गुलाब हुआ करता था, अब शायद एक छायाचित्र है लेकिन वह आज भी खिलता है। कभी मन के किसी खंडहर में, कभी भाषा के किसी टूटे पुल पर, और कभी उस आत्मीय मौन में जहाँ कोई कुछ कहे बिना सब कुछ कह जाता है।

रेशमी घास

जीवन की आपाधापी में गीत-संगीत से कुछ रेशमी घास के उगे होने का एहसास होगा........

विवेक कुमार मिश्र
वरिष्ठ साहित्यकार
कोटा, राजस्थान

गला खराब है मन भी ठीक नहीं है पर 'कला' फिल्म के गाने अचानक से सुनने को मिल गए फिर थोड़ा सा ठीक लगने लगा । गाना है - ' सजनिया के मन में इंकार है जाने क्यों बलमा घोड़े पर सवार है ' यह गाना मन की दशा के साथ - साथ प्रिय के मन को चलते बढ़ते देखता है । यह गाना आज युवाओं के बीच बहुत क्रेजी गीतकार अमित त्रिवेदी का सांग है जो युवा पीढ़ी में धड़कन की तरह से बज रहा है और युवा पीढ़ी क्या सबके बीच इन गानों का जिक्र है । हमें अपने समय के गाने फिल्म और पूरे दौर को एक साथ देखते सुनते चलना ही चाहिए । यदि आप केवल पुराने गाने के ही शौकीन हैं तो भी अपने समय की आवाज को समय के तर्क को और उस यथार्थ को भी देखें सुने जिसके बीच पीढ़ियां चल रही हैं । उनके बिंदास रंग को भी समझें केवल गुजरे जमाने से उनका आकलन करेंगे तो गलती होगी । इस गाने को सुनते सुनते आगे बढ़ता हूं कि मन को लगता है कि अमित त्रिवेदी के और भी गाने होंगे उन्हें भी क्यों न सुना जाएं समझा जाये कि क्या है उनके गानों में जिसकी दीवानी है आज की पीढ़ी। और सर्च कर सुनने लगता हूं । अमित का गाना बजने लगता है जिसमें आज के युवा मन की बातें सुनने को मिलती है यहां बड़े साफ शब्दों में कहा गया है कि 'तेरे जैसा तू है और मेरे जैसा मैं हूं' इस गाने को सुनते हुए बराबर लगता है कि हम जितना भी चलते हैं उसमें न जाने कितने मन कितने सारे लोग होते हैं । लेकिन आज की पीढ़ी अपने मन के साथ अपने सपनों को जीना चाहती है ।

उस पर चलने के लिए बड़े सिद्धत के साथ आगे बढ़ती है । यह कहना कितना साफ है कि 'तेरे जैसा तू है और मेरे जैसा मैं हूं' एक दूसरे को जानते समझते हुए यह आज की नई पीढ़ी जीवन के हर पथ पर आगे बढ़ना चाहती है । केवल अपने हिसाब से सपने ही नहीं देखना चाहती बल्कि अपने सपने के हिसाब से जीवन को समझते हुए जीवन को

यथार्थ के साथ जीवन जीना चाहती है । एक दूसरे को उसकी स्वायत्तता के साथ स्वीकार करना ही तो आज की पीढ़ी का यथार्थ है । यह पीढ़ी बिना किसी संकोच के कहती है कि तेरे जैसा तू है और मेरे जैसा मैं और दोनों अपनी स्वतंत्र सत्ता के साथ स्वतंत्र जीवन दर्शन के साथ एक दूसरे को पूरा स्पेस देते हुए आज के दुनियावी सत्य को स्वीकार करते हुए आगे बढ़ते हैं । यह पीढ़ी अमित त्रिवेदी के गानों के साथ अपनी मंजिल पर चलना जानती है । आज के यथार्थ को वास्तविक रंगों में रंग रही है । पृथ्वी पर एक नया यथार्थ एक दौर के बाद दिखने लगता है । नई पीढ़ी नए सिरे से जीवन को , सच को यथार्थ को और इन सबके साथ अपने सपनों को भी समझना व जानना चाहती है । आज का यथार्थ कुछ इस तरह खुल रहा है जिसमें जीवन है । प्रेम है । सपने हैं । और इन सपनों पर चलना है । एक गीत है सदियों पुरानी ऐसी कहानी / रह गई रह गई अनकही / क्या कभी बहार भी पेशगी लगाती है / आने वाले पतझड़ के ख्वाबों का / झरोखा सच था या ख्वाब था / निंदिया चुराई सदियों पुरानी कहानी / रह गई – रह गई अनकही । इस कहानी नुमा गीत को सुनते हुए आप न केवल अपने सुंदर दिनों में होते हैं बल्कि जीवन के हर सपने को बनते हुए जीवन के पथ पर प्रकृति को उसके यथार्थ और स्वप्न को एक साथ देखने के क्रम में जीते हैं । यहां जिस तरह आज की नई पीढ़ी अमित त्रिवेदी के गानों को सुन रही है और उसे जी रही है वह उनके जीवन का फलसफा भी है और जीवन को संपूर्णता में समझने की एक कोशिश है । जहां एक साथ की कविता और कहानी को एक पुरानी हवेली के साथ जोड़ते हुए जिंदगी के हर स्वप्न में परंपरा जीवन जमीन और आज के सत्य के साथ आधुनिकता को प्रदर्शित करते हैं । आज जो गाने लिखे जा रहे हैं वे जीवन की फिलासफी को बहुत गहरे स्तर पर आधुनिक जीवन यथार्थ के साथ जोड़ते हुए आगे बढ़ते हैं । इन गानों में आधुनिक पीढ़ी के जीवन में प्रेम को समझने व जतन करने का जो उद्योग किया गया है । लगातार सपनों को केवल सपने की तरह नहीं देखा गया है बल्कि सपनों के पंख पर यथार्थ की तीक्ष्ण दृष्टि हमेशा सवार होकर भाग रही है । सब कुछ वही है पर कुछ कमी रह गई। नहीं है तेरी आहटे । तेरी आहटे नहीं हैं । यह एक चीज का न होना जीवन को कितना विडंबना पूर्ण बना देता है इसे समझने के लिए तेरी आहट का होना कितना जरूरी है । कि होना और ना होना के दर्द से समझा जा सकता है । इस तरह यह गीत आज की पीढ़ी के सच , दर्द और सपनों को एक साथ साकार करते हुए जीवन को एक दार्शनिक अंदाज में प्रस्तुत करता हैं । यह गीत केवल गीत भर नहीं है कि गा दिए और चल दिए । नहीं–नहीं इन गीतों को सुनते हुए मन मस्तिष्क एक एक बोल पर एक एक शब्द पर इस तरह अटक जाता है कि बस सुनते रहिए । हर शब्द के साथ एक दुनिया बुन जाती है और उस दुनिया के यथार्थ व स्वप्न के साथ जिंदगी का चलना ही तो सही मायने में जिंदगी है । जिंदगी केवल खाने और सो रहने या पड़े रहने के लिए नहीं होती वल्कि अपनी दुनिया को अपनी पीढ़ियों के बीच नये सिरे से बन रहे सवाल और उत्तर को भी देखने की जरूरत होती है । जिसे देखने का जिम्मा केवल आज की पीढ़ी का नहीं है । आपको आगे बढ़कर आना होगा इनके साथ चलना होगा तभी जाकर इस समय संदर्भ और समाज को कुछ कुछ समझा जा सकता है । मन में घूमते हुए आज का जीवन संगीत बहुत कुछ कहता है । इस जीवन संगीत के साथ दर्शन को , यथार्थ को , सभ्यता और संस्कृति को एक साथ एक कोलाज के रूप में

देखने की जरूरत है । आज के बोल गीत संगीत जीवन के सच को बहुत दूर तक कहते चलते हैं बस सुनते देखते हुए चलें । सच में जीवन को अपनी संपूर्ण सच्चाई के साथ आने वाली चुनौतियों के रूप में ये गीत भी प्रस्तुत करते हुए चलते हैं । जीवन की आपाधापी व दौड़ में चलते – चलते संगीत , गीत और राग को सुनते चलें तो जीवन के यथार्थ और बीहड़ व खुरदरे मैदान पर कुछ रेशमी घास के उगे होने का एहसास भी हो सकता है । इन गानों के साथ नई पीढ़ी की प्रतिभा और समय समाज को समझा जा सकता है । इस पर से थोड़ा आगे बढ़े तो जीवन और जीवन दर्शन को समझने में थोड़ी आसानी होगी।

प्रेम की समझ

जयप्रकाश नारायण मिश्र
प्रयागराज

स्वार्थ पर आधारित सम्बन्ध 'मोह' कहलाता है, प्रेम नहीं। निःस्वार्थ सम्बन्ध 'सच्चा प्रेम' का सम्बन्ध कहलाता है। सांसारिक प्रेम प्रायः स्वार्थ के कारण होते हैं जिन्हें सच्चा नहीं कहा जा सकता जबकि आत्मिक प्रेम स्वार्थहीन होते हैं। बिना मांगे देना, बिना बुलाए आना, मांगने से पहले ही देना, कार्य करके न बोलना न श्रेय लेना के पीछे प्रेम होता है। हमें एकाध ऐसे मनुष्य या प्राणी से प्रेम करने का अभ्यास करना चाहिए जिससे हमें कोई अपेक्षा न हो। तभी निःस्वार्थ प्रेम की अनुभूति होगी क्योंकि हमें प्रायः स्वार्थ पर आधारित प्रेम करने की आदत है। जिसे कभी आंखों से देखा नहीं उससे भी प्रेम हो सकता है। रुक्मिणी ने श्रीकृष्ण को प्रत्यक्ष देखा नहीं था परन्तु उनका वर्णन सुना था और श्रीकृष्ण से प्रेम करने लगी। प्रेम विकार रहित तत्व है। ममता या मोह एक विकार है। हम मोह को प्रेम कहते हैं। प्रेम आत्मा की एक विशेष अवस्था है। आत्मा निर्विकार व निर्विचार होती है। जहां समर्पण होता है वहीं प्रेम है। 'I LOVE YOU' में जो LOVE है वह मोह है प्रेम नहीं है। इसलिए 'God is Love and Love is GOD'।

सामान्य जन की समझ है कि बिना स्वार्थ, आकर्षण या वासना के प्रेम संभव ही नहीं है। बिना व्यक्ति या वस्तु के प्रेम हो ही नहीं सकता। स्त्री-पुरुष का प्रेम अशरीरी भी हो सकता है, बिना स्वार्थ के भी हो सकता है, इसकी कल्पना सामान्य जन को नहीं होती है। जिसे हम प्रेम समझते हैं वास्तव में वह स्वार्थ पर आधारित भूख है, वासना है जो उपभोग के बाद समाप्त हो जाती है। हम स्त्री-पुरुष की वासना को प्रेम का नाम देते हैं, जो सत्य नहीं है।

निस्वार्थ प्रेम समझाने के लिए श्री कृष्ण ने रासलीला का अभिनय गोपियों संग किया। गोपियों को सच्चा प्रेम अशरीरी आत्मिक प्रेम समझाकर श्रीकृष्ण ने गोपियों का जीवन बदल दिया । 'रासलीला' आध्यात्मिक पुरुषों के लिए महान दिशा निर्देश है। रासलीला के समय श्री कृष्ण सात वर्ष के थे। प्रेम अति पवित्र तत्त्व है। सच्चा प्रेम ऋषियों ने जीव, जगत, जगदीश से किया, मीरा ने श्रीकृष्ण से किया। तुलसी ने राम से किया, राम ने सीता से और सीता ने राम से किया। राष्ट्र नायकों ने राष्ट्र से सच्चा प्रेम कर स्वयं को बलिदान कर दिया। मानव का जन्म सत्य ज्ञान, कर्म, प्रेम करते हुए सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए अन्ततः निष्कलंक जीवन जीकर भगवान की गोद में बैठने हेतु हुआ है ऐसा भारतीय दर्शन कहता है।

शिवमय शक्ति
:
शक्तिमय शिव

रश्मि धारिणी धरित्री
वरिष्ठ लेखिका एवं रंगमंच कलाकार
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

समाधिस्त शिव अचानक ध्यान से उठे और जैसे कुछ खोजने लगे । नंदी भी नहीं दिख रहे थे । तभी सामने से उमा आती दिखीं..और फिर ......

शक्तिमय शिव : तुम कहाँ थी उमा! सृष्टि में अनवरत विचरण करता मैं तुमको ढूंढता रहा, अंतरिक्ष से लेकर महासागरों के अन्धकारमय गहराई तक। अनेक कल्पों में हर रूप में ढूंढता रहा। अपने ध्यान में भी तुम्हारा ध्यान करता रहा। क्या हमारा मिलना पूर्व निर्धारित था? या हमने अपने मिलन को निर्धारित किया।

शिवमय शक्ति : मेरे शिव! मेरे स्वामी! मैं थी सदा छुपी तुम्हारे हृदय में, तुम्हारे ध्यान में साधना में, करुणा में, सृजन में, भोजन में, उन स्पंदनो में जो हर प्राणीमात्र को ऊर्जा देती है ! महासागरों की तलहटी में भी तुमने मुझे देखा था, अनवरत चलती जल धाराओं में शंख सीपियां वनस्पति मत्स्य समूहों में, मैं वहीं थी मेरे प्राणप्रिय प्रतीक्षारत पर्वतों के

उच्चतम शिखर पर हिमखंडो में उनकी बहती अनवरत नदियों में, प्रकृति की कोमलता में, मृगों के चंचल दृग में, बसन्ती रंगों में, ऋतुओं और वायु में, तुम्हे स्पर्श कर बह गई जो, उसी बयार में मेरे शिव सृष्टि के हर प्रेम में तुम्हारे साथ मैं ही थी अनुराग में, जिस सरस्वती तट पर तुम विराजे उन रची हुई वेद ऋचाओं में, मैं बहती हुई ऊर्जा थी वाणी में, संगीत में। तुम्हारे डमरू से निकले हर नाद में मैं अनन्त काल से तुम्हारे समीप थी,जीवन की उत्पति से लेकर हर प्राणियों के हर रूप में। मैं वहीं छुपी थी तुम्हारे हृदय में, तुम कहो ना! मुझे स्वीकार करने में इतना विलम्ब !मेरी साधना तपस्या क्यों तुम्हें ना डिगा सकी !!!

शक्तिमय शिव : मेरी प्रिया! मैं तुम्हारे साथ रहा हूँ हमेशा उन काल खण्डों से सूर्य के बनने से भी पहले मैं और तुम ही तो थे जल रूप में! अनंत ब्रह्मांड में अनवरत विचरण करते हुए। धरती पर बरसे जल में , प्रथम जीवन अंकुरण मेंभोज्य बन कर तुम्हारे साथ भोजन में रहा प्राणवायु बन कर स्पंदन में रहा । शैवालों से लेकर शंकु बीजों में पुष्प धारी वृक्षों में मैं और तुम ही तो थे। क्या तुम्हे याद है तुम ही वो डेनिसोवन कन्या थी, मैं था वही निएंडरथल युवक तुमको प्रेम प्रणय करके नए मनुष्य रूप को जन्म देनापूर्व निर्धारित था, हम तुम हर उस सृष्टि रूप में संग थे तुम्हारे चरणों तले जड़ों की मिट्टी था। तुम यूं कोहरा थी मेरी और मैं तुम्हारा बादल फूलों पे मंडराते तितलियों में, मधु को मधुरता देता मैं ही था!

मेरी अपर्णा ! क्या तुम्हे स्मरण है, तुम्हारी साधना के हर चरण में तुम्हारे चक्रों को प्राण देता मैं ही था। चेतना में , होता हुआ सहस्त्र चक्र को जागृत करने वाला ऊर्जा मैं ही था स्मरण करो उन प्रकृति की घटनाओं को हम संग ही थे ।बिना हमारे एक संग हुए घटनाएं घट नहीं सकती हम तुम एक दूसरे को पूर्ण करते हैं, जो तुम हो वहीं मैं हूँ और जो मैं हूँ वही तुम हो एक दूसरे का प्रतिबिंब, मैं शरीर हूँ तुम प्राण शक्ति, काल खण्डों से परे हमारा मिलना पूर्व निर्धारित भी है और हमीं पुनः अपने मिलन को निर्धारित करेंगे।

KEEP QUIET

पाब्लो नेरुदा की कविता "KEEP QUIET" का अनुवाद

प्रो. डॉ. एस पी सती

प्रसिद्ध लेखक एवं पर्यावरणविद

वी.सी.एस.गढ़वाली उत्तराखंड औद्यानिकी

और वानिकी विश्वविद्यालय

भरसर, उत्तराखंड

आओ हम 12 तक गिनें
और एक बार के लिए पृथ्वीतल पर
यकायक ठिठक जाएं
हम किसी भी भाषा में कुछ भी ना कहें
एक क्षण के लिए जड़वत हो जाएं
ना मारें ज्यादा हाथपांव
यह एक अलौकिक क्षण होगा
बिना आपाधापी बिना यन्त्र
साथ-साथ रहें हम सब
एक आकस्मिक अजनबीपन में
उस क्षण
मछुआरे ठंडे समुद्र में
नहीं पहुंचा सकें नुकसान ह्वेलों को
और नमक समेटता आदमी
देखरेख न करे अपने घायल हाथ की
वे जो हरित युद्ध बुनते हैं
गैस और ज्वालाओं के युद्ध
नेस्तनाबूत जीवन पर जीत
वे पहनेंगे साफ- सुथरे वस्त्र
और टहलेंगे अपने सखाओं के साथ
एक छांव में बिना किसी काम के
वह स्थिति,
जिससे जड़ता का आभास ना हो मुझे
'ज़िंदगी इसी का नाम है'
मैं नहीं चाहता मुर्दों में खुद को देखना
यदि हम 'चलती का नाम ज़िंदगी'
जैसे एकपक्षीय दृष्टिकोण वाले ना हों
और कुछ पल कुछ भी ना करें
संभवतः एक असीम शांति
कभी भी खुद को न समझ पाने की
और खुद को मौत से डराते रहने की
इस घटाटोप को तोड़ सके
शायद हमें यह धरा सिखाये
कि जब सब कुछ मृतप्राय: लगने लगे
और बाद में जीवित साबित हो जाये
तब मैं 12 तक गिनूंगा
तुम चुप रहोगे तब
और में लौट आऊंगा।।।

चित् भूमियां

वि वे क मि श्रा

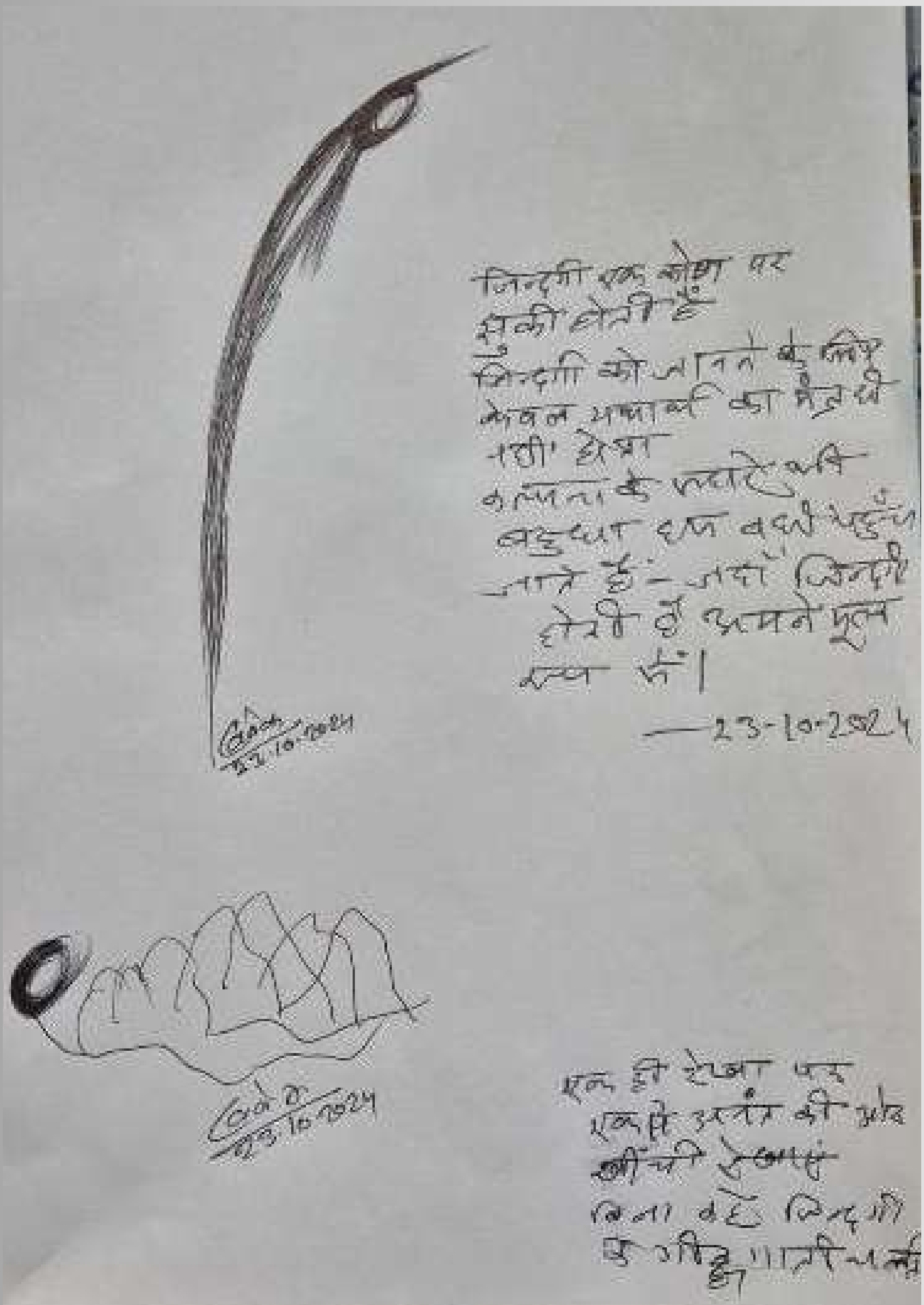

विवेक मिश्रा,
प्रसिद्ध लेखक, कवि
कोटा, राजस्थान

एक जगह से चलते हैं और चलते चलते रास्ते अलग हो सकते हैं। यह भी हो सकता है कि एक जगह से ही अलग अलग मंजिलों के लिए चल दिए हों। यह भी कह सकते हैं कि स्त्री पुरुष के बीच असमानता कम समान चित् भूमियां ज्यादा होती हैं। एक ही चित् में स्त्री -पुरुष साथ साथ पलते हैं और साथ साथ चलते हैं। हमारा आधार एक ही है एक ही जड़ से निकल कर अलग अलग रास्ते पर हम सब चल पड़ते हैं और कहते चलते हैं कि सब कुछ जीवन के संदर्भ से आता है।

वशिष्ठ अनूप
विभागाध्यक्ष हिन्दी,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी

दो ग़ज़लें

(1)

नेह - नाता निभानातुम्हें आ गया,
यानी ख़्वाबों में आना तुम्हें आ गया।

जो बताने में अल्फ़ाज़बेबस लगे,
आँखों-आँखों बताना तुम्हें आ गया।

थोड़ा कहना, ज़रा अनकहा छोड़ना,
ढंग यहशायराना तुम्हें .आ गया।

पंखुड़ी - पंखुड़ी परतुम्हारी हँसी,
बेसबब खिलखिलाना तुम्हें आ गया।

सादगी में क़यामतकी जादूगरी,
और दिल में समाना तुम्हें आ गया।

याद रहतेहुए भूलने की अदा,
ख़ूबसूरत बहानातुम्हें आ गया।

आ गया मौन रहबोलने का हुनर,
फिर निगाहें झुकाना तुम्हें आ गया।

धीरे-धीरे हुआ इश्क़ का यह असर,
मुस्कराकर लजाना तुम्हें आ गया।

देखकर भी नहींदेखने की अदा,
और नींदें चुराना तुम्हें आ गया।

मेरे घर का पता तुमको किसने दिया,
बेझिझक आना- जाना तुम्हें आ गया।

(2)

सारे जग से निभाया तुम्हारे लिए,
हर किसी को मनाया तुम्हारे लिए।

नाज़ से सर उठाकर चला हर जगह,
हर जगह सर झुकाया तुम्हारे लिए।

तुमको अपना बनाने की थी कामना,
सबको अपना बनाया तुम्हारे लिए।

जाने किस रूप में तुम कहाँ पर मिलो,
द्वार हरखटखटाया तुम्हारे लिए।

चाहता थातुमारी हँसी देखना।
मैंने सबकोहँसाया तुम्हारे लिए।

कौन - सा राग तुमको सुरीला लगे,
राग हरगुनगुनाया तुम्हारे लिए।

नमिता राकेश
राजपत्रित अधिकारी,वरिष्ठ साहित्यकार
नई दिल्ली

अपनी मर्ज़ी का एक दिन

अपनी मर्ज़ी का एक दिन
कब से नहीं जिया
क्योंकि
दूसरों की मर्ज़ी पर
गुज़ार दी पूरी उम्र
आदत ही नहीं रही अब
अपनी मर्ज़ी चलाने की
सदैव दूसरों के लिए
जीते जीते
अपने लिए जीना ही भूल गई
और अब
जब अपनी मर्ज़ी चलानी चाही
तब
बर्दाश्त नहीं हुआ उनको
जिनकी मर्ज़ी पर
जीती आई अभी तक
अपनी मर्ज़ी का एक दिन
इतना बेशक़ीमती होगा
यह कभी नहीं सोचा था
कि उसको जीने के लिए
दूसरों की मर्ज़ी चाहिए होगी
जो शायद अब मुमकिन नहीं ।

दर्ज़ी

औरतें दर्ज़ी होती हैं
रिश्तों को जोड़ने में
क्या खूब कारीगरी दिखाती हैं
रफ़ूगर भी खूब होती हैं
उधड़े रिश्तों को ऐसे रफ़ू करती हैं
कि कोई जान ही नहीं पाता
भीतर के टूटते धागों का मर्म
आपसी रिश्तों का दंश, वो तीखे व्यंगबाण
जो पल भर में
रिश्तों में गांठ डाल देते हैं
उन गांठों को खोल कर
फिर से एक करने में माहिर होती हैं
औरतें
उधड़े और फ़टे पुराने कपड़ों और रिश्तों को
कभी सी कर, कभी रफ़ू कर
इस होशियारी से
एकसार कर देती हैं
कि पता ही नहीं चलता
औरतें
कपड़े सम्भालने और रिश्ते सम्भालने में
हुनरमंद होती हैं
वो रिश्तों में आई
खटास, ईर्ष्या, मनमुटाव, दूरी, अहंकार को
मिठास, वाक्पटुता, सौहार्द की
कैंची से काट कर
रिश्तों को मज़बूत धागों से
जोड़ने का हुनर रखती हैं
और जिस घर में ऐसी औरतें होती हैं
वो हमेशा घर रहता है
मकान नहीं बन पाता

डॉ. कमलेश राय
वरिष्ठ साहित्यकार
मऊ,उ.प्र.

(एगो रचना लोर की खातिर)

ढरे जो लोर त जिनगी क कहानी बनके
कबों ढरे न महज आंखि से पानी बनके

अनकहल पीर पहारन के आंखि से टपके
नदी केबीच बहे धाररवानी बनके

धूप में तप के उठे जब कबों समुन्दर से
बरसे धरतीपर चुनर नेह क धानी बनके

बीच पलकन के थमल लोर मौन भाषा ह
कहीं अचके न ढरकि जाय बेपानी बनके

कबों बेदर्दसमय क ईगवाही देई
रहे द आंखि में ऐनाक निशानी बनके

(एगो रचना माई खातिर)

रहीलां हम कहीं दुख में त माई के बुझा जाला
लगावेली कवन चस्मा जे एतना ले देखा जाला

उठाके माथ ऊपर जब कबों अँचरा पसारेली
त माई के ओ अंचरा में समुंदर ले समा जाला

मेटावेभूख क पीरा त कवनो हाथ क रोटी
खिया देली जे माई त सहीमें मन अघा जाला

हंसी माईक सब देखेरोवाई ना सुने केहू
कबों मुंह ढांपि के रोवेली त पथरो लोरा जाला

न जाने हाथमें माई केबाटे कवन ऊ जादू
फिरा देली जे माथे पर त सगरी दुख भुला जाला

अजित कुमार राय
वरिष्ठ कवि, कन्नौज

असहमति का पहला स्वर :प्रह्लाद

जब पितृसत्ता न खिलने दे
पुत्र की निजता का प्रसून,
बाधित करे पारिवारिक लोकतंत्र का परिवेश,
तो उठता है असहमति का स्वर।
जैसे बाजश्रवा के सम्मुख खड़ा हो नचिकेता।
उसे हिरण्य या कि स्वर्ण - श्रृंखलाओं से
बांधने की पहली कोशिश असफल होती है।
आत्मज शैव दर्शन नहीं,
सात्विक वैष्णव होना चुनता है।
पिता को पसन्द नहीं है,
अपने शत्रु का गुणानुवाद।
पहले वह धमकी देता है,
फिर मृत्यु दंड!
आसुरी वृत्ति और किसे कहते हैं!
हम यही तो करते हैं।
बेटे को मार ही देते हैं,
अपने सांचे में ढालकर।
किन्तु मृत्युंजय आह्लाद नहीं मरा,
न ही संकल्प टूटा बालक का।
आत्मा को कोई आग जला नहीं सकती,
कोई शस्त्र उसका उच्छेदन नहीं कर सकता।
जलाने वाली आग ज्योति बन जाती है तमिस्रा में।
यह पहला शालीन सत्याग्रह था,
सत्ता के बरक्स सत्य के वरण का,
सत्यनारायण की शरण का।
हम जिसे भक्ति कहते हैं,
वह असहमति की शक्ति भी है।
आत्मिक दृढ़ता के साथ
अहं का विसर्जन भी है।
प्रेम की नृत्य - मुद्रा भी है।
भय का तर्पण भी है।
रूढ़ियों के खंभे में आबद्ध होने पर भी
अपने भीतर के नख - दंत का उभार!
अपने समय के हिरण्यकश्यप का संहार!
किसी शस्त्र से नहीं,
शत्रु की बौद्धिक पंगुता से।
वरदानों के बाहर के शून्य में साधन हीन।
तब सतयुग आता है,
जब सत्ता एक मुकुट नहीं, दायित्व होती है।
राज्य प्रजा के कल्याण का केन्द्र होता है।
भोगवाद नहीं,
त्याग का तिलकोत्सव होता है।
सत्ता शालीन होती है।
जब खड्गहस्त असुरता
जीवन की सारी सम्भावनाओं को
कर देती है निरस्त।
फिर भी प्रभु का होता है प्राकट्य,
एक चमत्कार की तरह,
निराकार आकाश में उगते सूर्य की तरह,
तब सतयुग आता है।

डॉ अन्नपूर्णा श्रीवास्तव
वरिष्ठ साहित्यकार
पटना बिहार

प्रेम

ओ प्रेम !
तुम्हें मैं युगों से, शायद जन्मों से -
ढूँढ रही, तुम मिले नहीं....!
कहाँ हो तुम...?
अनेक ठिकाने तुम्हारे वर्णित हैं-
श्रुति- स्मृति, अनेक शास्त्रों में..!
मगर तुम...
कहीं मिले नहीं...!
एक बार था महसूसा - तुम्हें-
माँ की आँखों में...!
फिर तो पूरी उम्र - तलाश ही रही...
मगर तुम मिले नहीं...!
क्यूँ ...?क्यूँ प्रेम, क्यूँ...?
मैं तुम्हें पाना चाहती-
अदेह, विस्मृत हो-
तुममय हो जाना चाहती...!
तुम्हारी आहटें -
कभी - कभी मिलती है, साँसों में...
जब तक मैं देखूँ,तुम खो जाते हो..
ढूँढते जीवन,
अब कुछ पल शेष रहा
प्रेम... ओ प्रेम... मैं तुम्हें पा न सकी
पर खुद में बसा लिया,
अब अनगिन रूपों में
तुम ही तुम तो
दिखते हो!

विवेक कुमार मिश्र
वरिष्ठ साहित्यकार
कोटा, राजस्थान

आत्मा की खिड़की से

तुम कुछ कहते नहीं
पर सब कुछ
महसूस कर रहे हो
जी रहे हो....
जीने की तरह जी रहे हो
इससे बढ़कर और क्या हो सकता ?
कहते हैं कि जो मन को जीता है
जो प्रेम में होता है
अर्थ को जीता है
और अपनी ही स्मृति को
बार बार खोलता है
वहां से जादुई पोटली मिल जाती
जीने के सूत्र मिल जाते
और पुरुखों की दी हुई
किताब मिल जाती है
जिसमें लिखा है कि...
अपने लिए क्या जीना
जीना तो अर्थमय होता है
जब अपनों के लिए जीते हैं
अपनों की खुशियां में
अपनी ख़ुशी ढूढ़ते हैं
और आत्मा की खिड़की
खोलकर रखते हैं कि
जब जैसे थके मांदे आओगे
आंखें तुम्हारा ही
इंतज़ार करती मिलेंगी
आत्मा की खिड़की से बार बार
पुकार लगाता रहा है मन कि
एक दिन तुम लौट आओगे
फिर फिर हमारी दुनिया में
और यह दुनिया फिर...
अंतहीन संवादों के साथ चल पड़ेगी ।

प्रतिमा सिंह

मऊ, उ.प्र.

वजूद

घूट-घूट कर कुछ औरतों को वजूद तलाशते देखा,
एक औरत को खुद से अपना वजूद बनाते देखा।
देखा था उसे अपने मां के साथ सर पर बोझ ढोते हुए,
अब उसे अपने बच्चों का भविष्य संवारते देखा।
जाति के नाम पर कभी आई नहीं घर के अंदर,
उसे सवर्णों के घर बर्तन और झाड़ू लगाते देखा।
एक दिन पूछ दिया जो हाल उसका,
उसके अंदर गलत के खिलाफ एक आग देखा।
कुछ स्वीकार कर जाती हैं अपने पति के औरों से संबंध,
पति के हवस का उसमें प्रतिकार देखा।
अनपढ़ होकर भी वो सीखा गई गलत का विरोध करना,
पढ़ी लिखी लड़कियों को झूठे प्रेम में पड़े बर्बाद होते देखा।
एक बच्ची से औरत तक के सफर को तय करते हुए,
अक्सर स्त्रियों के फैसले को बर्बाद देखा
कुछ सहती हैं बचपन से स्त्री होने का तंज,
तो कुछ को बचपन से ही बारूद और आग देखा
कोई रखती है बचपन में ही पांव कामयाबी की बुलंदियों पर;
कुछ को अबला असहाय लाचार देखा।
घुटती हैं कुछ खानदानी इज्जत के नाम पर;
बिना खानदानी इज्जत के भी जिंदगी आबाद देखा।
बहुत सोचने समझने और रोने से नहीं संभली जिसकी जिंदगी,
खुद के लिए फैसले से खुशहाल देखा।

नीलम सरोज'खुशबू'

मऊ, उ.प्र.

आशा का बुझता दीप

लौट आया हूं,जीवन समर से
थक चुका यह तन नश्वर।
टूट चुका है,आशा का बन्धन,
सुनाऊं किसे यह वेदना गहनतर।।

इस जीवन रण यात्रा में
पद-चाल हो गये अब कुंद।
करुण-वेदना जागृत हुयी,
राहें अन्तर्वाष्प से हुये धुंध।।

पहले भी गिरा था अनेकों बार
पर गिरकर उठ खड़ा हो जाता था।
विपदाओं से लड़कर,निखरकर,
हर संकट से लड़ जाता था ।।

नहीं रहा अब वो अलबेलापन
हो चुका ढलते सूरज सा शरीर।
दबा हूं जिम्मेदारियों के बोझ तले,
उठ रही है रग-रग में पीर।।

झोंका विपदा की है आयी
उम्मीद की लौ बुझाने को ।
पुष्पित, हर्षित जीवन लतिका को,
अश्रु की तमस कालिमा में डुबाने को।।

दीर्घ निशा के सघन तमस में
क्या जीवन में खो जाऊंगा।
असिंचित,असेवित पादप सा,
आखिर कब तक मुरझाऊंगा।।

डॉक्टर जय महलवाल(अनजान)

बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश

नटखट कान्हा

नटखट कान्हा देखो कैसे मुस्कुराता है,
पैरों में घुंघरू बांध देखो कैसे इतराता है,
गोपियों को देखो कैसे,
प्यारी प्यारी मुरली सुनाता है,
मुरली की धुन पर देखो,
गोपियों को कैसे-कैसे नचाता है,
सिर पर देखो कैसे,
प्यारा सा मोर पंख लगाता है,
दूध दही का इतना दीवाना,
देखो कैसे-कैसे मटकी फोड़ने आता है,
वृंदावन की गलियां देखो,
कैसे-कैसे अपने भक्तों का मन बहलाता है,
अपने मैया से करता है इतना प्यार,
उसकी डांट खाने से देखो,
बिल्कुल भी नहीं घबराता है,
नटखट कान्हा देखो,
कैसे कैसे अपनी लीला रचाता है,
गोवर्धन पर्वत को देखो कैसे,
अपनी उंगली पर उठाता है,
अपनी बाल लीला से देखो,
कैसे पूतना को हराता है,
देखो इस संसार में कैसे अपनी लीला रचाता है,
कंस मामा का वध करके,
देखो सारे लोगों को कैसे,
उसके अत्याचारों से बचाता है,
अर्जुन का सारथी बन के, देखो कैसे महाभारत के,
युद्ध में कौरवों को हारता है,
कैसे-कैसे देखो दुनिया को,
गीता का उपदेश पढाता है,
कृष्ण कन्हैया देखो,
कैसे-कैसे अपनी लीला रचाता है,
आज सारा जग देखो कैसे,
जन्माष्टमी धूमधाम से मनाता है।

रश्मि धारिणी धरित्री
रंगमंच अभिनेत्री, साहित्यकार
लखनऊ, उ.प्र.

अलकनंदा

बरसों पहले सुना था
कोई वापस ना आ पाया
जो हिमालय गया !
लौटा तो एक अंश स्वयं का
वहीं किसी किनारे छोड़ आया...
सीने से लिपट कर हिमालय
उसके अस्तित्व में
कही छुप कर चला आया ....

पार करती हूँ जब जब
हिमालय वलय
इक इक हिस्सा मुझमें
कही ठहर जाता है
अलकनंदा सी मैं उमड़ कर
हर बार लौटती हूँ
और हृदय में
शिखर धरा मिटटी जंगल
समेट लेती हूँ ....

तुमसे मिलन की व्याकुलता
रोम रोम में बांज उगाती है
तुम बुरांश से रंग
चुरा कर
मेरी वेणी सजाते हो
प्रतीक्षमय ये अनन्त प्रहर
मेरे युग बन जाते हैं
तुम्हारे शिखर पर बैठकर
तुम्हारी ही प्रतीक्षा में
गिनती हूँ दूरियाँ
गहराती संध्या के
उजालों में
इक इक घाटियों के अंधेरे
और टिमटिमाती जुगनुओं सी
सुदूर गांवों की बिजलियां
तुम दूर ढलते नज़र आते हो
उन्हीं पगडंडियों में

व्याकुल नैनों से एक क्षण में
देखती हूँ त्रिशूल पर्वत से चौखंभा
नाप आती हूँ तुम्हारे घर का रस्ता
देवदार की फुनगी गिनते
पूरे 40 मोड आते हैं लहरा कर
और 5 पहाड़ी नदियां
मेरे तुम्हारे मिलन की प्रतीक्षा में
उगते हैं कोबरा लिली
पार करती हूँ जब
जंगल का रस्ता
मिलते हैं मार्टिन के बिल,
दुबके हुए हिरण
और छुप कर देखती एक जोड़ी आँख
गुलदार की
वो जानते हैं मेरे तुम्हारे मिलन
की व्यग्रता और व्याकुलता

जल्दी जल्दी क़दम बढ़ाती हूँ
घसियारिनों के घास के गट्ठर में
छुप कर
अपना हाथ बढ़ा कर
आसमां में
शुक्र टांग देती हूँ

इक संकेत पर दीप जल उठते हैं
भगवती के मंदिरों में
और पवित्र घंटियां
गुनगुना देती हैं
पवित्र अग्नि में तुम्हारी
कुशलता मनाती
हवि देती हूँ यज्ञ में
अपनी आत्मा की!

मुझमें मेरा कही खोता जा रहा है !
हिमालय मुझमें उतना ही
विराट हो रहा है ...
हर बार तुम तक लौटती हूँ
तुमको ढूंढ़ने में हर बार
तुम्हारा कुछ मुझमें रह जाता है
इक बादल उमड़ कर आता है
मुझको ख़ुद में समेट कर
प्यासी धरती पर बरस जाता है

अपना अस्तित्व का टुकड़ा
वहीं कही भूल आती हूँ ...
समय की परतों में कहीं
मैं हिमालय होती
जा रही हूँ
और तुम अलकनंदा......

आनंद विक्रम सिंह

मऊ, उ.प्र.

कुछ रह जाना चाहिए

जब कोई चला जाता है
तो ऐसा नहीं कि वो बस उठ कर चला जाता है—
वो कुछ तो ले जाता है साथ,
और अगर सब कुछ ले जाए
तो हम क्या बचा पाएँगे?

हर विदा में एक छोटा सा मर जाना छुपा होता है,
पर हर मरने में जीवन की कोई याद रहनी चाहिए।
एक अधूरी चाय,
बिस्तर पर बिखरा तकिया,
कोने में रखी अधपढ़ी किताब—
इन सब में किसी के होने की गवाही होनी चाहिए।
क्या तुम सच में चाहते हो
कि जब तुम जाओ
तो तुम्हारे बाद कुछ भी न बचे?
न तुम्हारी हँसी की गूंज,
न वो झगड़ों की चुप्पियाँ,
न वो ख़ामोशी जिसमें
कभी हम एक-दूसरे को समझ लिया करते थे?

हर रिश्ता कोई किताब नहीं होता
जिसका आख़िरी पन्ना लिखा जाए
और फिर उसे बंद कर
अलमारी में रख दिया जाए।
कुछ किताबें अधूरी ही सुंदर होती हैं,
कुछ पन्ने फटे भी हों तो भी
उनमें हमारी साँसें ज्यों की त्यों
महकती रहती हैं।

जाते-जाते तुम थोड़ी जगह छोड़ जाओ
जहाँ मैं रो सकूँ,
जहाँ मैं मुस्कुरा सकूँ
बिना तुम्हारे भी तुम्हें महसूस करते हुए।

कभी-कभी यादें बोझ नहीं होतीं
वे सहारा होती हैं।
वे वही हाथ होती हैं
जो गिरते समय थाम नहीं पाते,
पर गिरने के बाद उठने की वजह बन जाते हैं।

हर अलविदा अगर सफ़ेद हो
तो जीवन कितना बेरंग होगा।
थोड़ा पीला, थोड़ा नीला,
थोड़ा दर्द का रंग भी ज़रूरी है
ताकि पता चले
कि तुम गए नहीं,
बस रुके हो कहीं,
मेरे अंदर।

इसलिए—
जब तुम जाओ,
तो सब मत ले जाना।
थोड़ा सा “हम”
यहाँ छोड़ जाना।
कुछ रह जाना चाहिए—
तुम्हारे जाने के बाद भी जीने के लिए।

रेणु सिंह राधे
कोटा, राजस्थान

सितम यूँ न गिन गिन कर, कर
हम भी तो इश्क ही करते हैं
तू तो चाहता है दौलत जहां की
हम है के तुझे चाहते हैं .....

साजों सामान खूबसूरती के
अपने हुजूम में नहीं रखते हैं
एक तेरा नाम लिया और संवर गए
बस यही अरमान रखते हैं......

काजल आंखों का करता है शिकायत
ख्वाब भी तो अब आने से डरते हैं
कुछ और इन में बसेगा कैसे
बस तेरा अक्स जो धरते हैं.....

राज अब तो खुलने लगा ज़माने तेरा
इश्क की तो बात कहा करते हैं
प्रेम बंधन बांधा सावरे से
बस हर पर उसी की माला जपते हैं.....

गीत

जब चाहत की झंकार उठी
आँखों से गिर कर शबनम
मेरे अधरों पर कई बार रुकी
चाहत नई नई है
दिल में प्यास जगी
मन में तेरी आस लगी
चाहत बनूँ मैं तेरी
तू चाहत हो मेरी
तू ऐसा मनमीत बने
मेरे अधरों की गीत बने!

शायरा बानो
मऊ, उ.प्र.

घनश्याम कुमार
पलामू, झारखंड

सदियों से बुहार रही......

घर में रोज फैलते हैं अपशिष्ट
अनकहे गुहार रही
नित्य की तरह
सदियों से बुहार रही
फिर भी मिटता नहीं मैल
धूल और बिखरे पड़े हैं कण
चादर ओढ़े आती है धुआं
सहसा देखते ही देखते घुट जाता है गला
समझ नहीं पाती
पितृसत्तात्मक का खेल
अतीत से रेखाएं खींची गई
क्यों खींची गई स्त्रियों के लिए
केवल लक्ष्मण रेखा
रोज निशाचर बदलते हैं भेष
हर ले जाती हैं सीता अतीत की तरह
दुशासन बन कोई खींचता है
निर्भय एवं विभत्स
द्रौपदी के केश
नित्य की तरह गुहार रही
सदियों से बुहार रही

ग़ज़ल

वह चाँद चाँदनी से सजी रात की खुशबू
आती है याद पहली मुलाकात की खुशबू

इतना न पूछ मेरे महकने की हक़ीक़त
बिखरी हुई है तेरे ख़्यालात की ख़ुशबू

बहकी-सी शाम बहकी फ़िज़ा बहके से तारे
मदहोश कर रही है ये हालात की ख़ुशबू

हर बात पर हज़ारों जवाबों की नुमाइश
हर लफ़्ज़ में बसी है सवालात की खुशबू

खिंचकर चले ही आए लुटाने को 'पवन' दिल
कहते इसे हैं प्यार के जज़्बात की ख़ुशबू

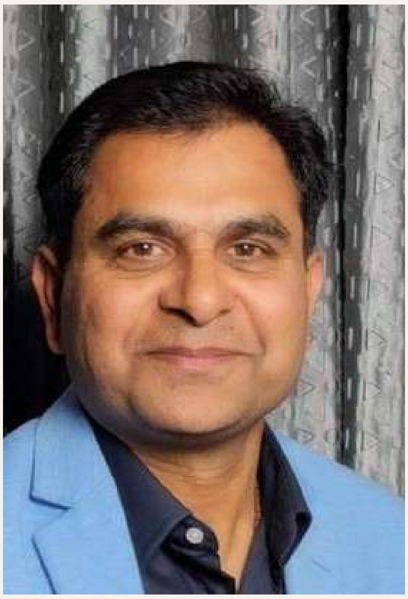

लवलेश दत्त 'पवन'
बरेली, उ.प्र.

बृजेश गिरि
प्रवक्ता, जैश किसान इंटर कॉलेज
घोसी, मऊ उ.प्र.

अन्तिम शब्द

अन्तिम शब्द
नहीं निकल पाए थे
तुम्हारे मुँह से,
गला रुंध सा गया था तुम्हारा
और तुमने
अपने चेहरे को
ढंक रखा था
अपने हाथों से।

कुछ क्षणों बाद
फफक के रो पड़ी थी
और सिमट कर आ गयी थी
मेरे करीब
सहारे की तलाश में.....
लेकिन मैं तुम्हें
नहीं संभाल सका था।
और मैं ?
(कितना असहाय था)
आह!
कितना निरुपाय था मैं !!

वो पगली

परीक्षा कक्ष की शोभा
मनोरम रूप वाली
सामने की पंक्तियों की चौथी आभा
अनमने भाव से बैठी
कुछ तन्मयता थी उसकी लेखनी में
कलम से स्याही को दौड़ा कर
कर रही थी सृजन अपने जीवन का

जब कभी मिलता ठहराव
जब कभी भरना होता दीर्घ श्वास
दौड़ा लेती नज़र सामने दीवार पर
और फिर हल्की सी मुस्कान
छा जाती उसके अधरों पर
फिर मौन, कर्म में रत

रूप बाला थी, मूरत थी आदर्श की
लालिमा से युक्त कपोल उसके
चांदनी से लिपटी काया थी
सौंदर्य की स्वामिनी स्वयं थी
अपने खंजनी नेत्रों से
एक क्षण के लिए जब
कभी देख लेती
भेद देती हृदय की भीत को
झंकृत कर देती मन के हर तार को
वो पगली।

कामरान खान
मऊ, उ.प्र.

REPENTANCE

My attachment with you was not a fun.

It was not a time pass relationship
Which I had nurtured with you for last one year.
But your bereavement crushed me mentally

My hopes were weaving a castle of love with you,
But your reluctant desire left it unfinished.

You always took me in your favour
How foolish I was to assume it forever.

I knew you deserved better but I thought
Who could be a real savour except me.

You were surrounded by the clouds of doubts
Which ultimately left me in the burst of tears
And no clear vision to move ahead.....

JAY SHREE
Lecturer,
DAV Girls Inter College
Mau, U.P.

लघु कथा- पैसे की कीमत

पियूष गोयल
मिरर इमेज मैन, लेखक
ग्रेटर नोएडा, उ.प्र.

एक क़स्बे में दो घनिष्ठ मित्र रहते थे,बात आज़ादी के तुरंत बाद की हैं,एक धनी था,एक इतना धनी नहीं था,रोज़ाना कमाना और गुजर बसर करना,पर दोस्ती की लोग मिसाल दिया करते थे। दोनों दोस्त अपने-अपने माँ बाप की इकलौती संतान थे।एक दिन दोनों दोस्त साथ-साथ अपने-अपने घरों को जा रहे थे,विदा लेते समय निर्धन दोस्त ने अपने दोस्त से 10 रुपये उधार माँगे,धनी दोस्त ने देर नहीं की देने में और बोला कुछ और चाहिए तो बता,नहीं-नहीं मुझे तो बस 10 रुपये ही चाहिए। अगले दिन धनी दोस्त अपने दोस्त का इंतज़ार करता रहा, सुबह से दोपहर हो गईं,आपस में नहीं मिले चिंता होने लगी,बहुत इंतज़ार करने के बाद धनी दोस्त अपने दोस्त को देखने उसके घर की ओर चल दिया,घर पर ताला लगा था,पड़ोसियों से पूछा सब ने मना कर दिया हमें कुछ नहीं बता कर गया हैं,,हाँ सुबह क़रीब 4 बजे कुछ हलचल तो थी।धनी दोस्त सोच में पड़ गया आख़िर बिना बताये कहाँ चला गया,हर रिश्तेदार के यहाँ पता लगाया पर कुछ पता न चला, समय बीतता रहा,धनी दोस्त कुछ समय के लिए तो परेशान रहा,कुछ समय बाद शादी हो गई बच्चे हो गये,अपने काम में व्यस्त रहने लगा। जब भी समय मिलता रिश्तेदारों से पूछताछ करता रहता था पर पता न चला।क़रीब 25 साल बाद धनी सेठ को अपने व्यापार के लिए लखनऊ जाना हुआ, काम के कारण सेठ को क़रीब एक सप्ताह रुकना था,सेठ सोचने लगे क्यों न शहर भी घूम लिया जाये,एक दिन दोपहरी का खाना खाने एक होटल में रुके,ग़रीब दोस्त अपने धनी दोस्त को पहचान गया,जैसे ही सेठ खाना खाने के बाद पैसे देने के लिए काउंटर पर आया,दोस्त ने पैसे लेने से मना कर दिया,धनी दोस्त के पैर पकड़ कर ज़ोर- ज़ोर से रोने लगा और कहने लगा मैं तुझे वो 10 रुपये नहीं दूँगा,जैसे ही धनी दोस्त ने ये सुना तुरंत गले से लगा लिया, दोनों दोस्त गले लग कर आपस में बहुत रोये,धनी दोस्त रोते हुए बोला पगले मैं तेरे से 10 रुपये लेने नहीं आया हूँ।मैं तेरे से बहुत नाराज़ हूँ बिना बतायें यहाँ आ गया, मुझे पता हैं पर मैं क्या करता। इसके लिए मुझे माफ़ कर दें पर ईश्वर ने हमें फिर से आज मिलवा दिया,आपस में बहुत बातें हुई अपने दोस्त को घर ले गया और अपने बच्चों से मिलवाया,अपने बेटे से बोला जा अपने ताऊ का सामान उस होटल से ले आ जिसमें ठहरें हुए हैं,रात का खाना खाने के बाद,सब बैठ कर बातें कर रहे थे, ग़रीब दोस्त ने अपने बचपन के दोस्त के बारे में बताया और मैंने 10 रुपये उधार लेकर बिना बतायें अपने माँ बाप को लेकर मैं यहाँ आ गया,उन 10 रुपयों से मैंने

चाट की रेहड़ी लगाई,मेहनत की, आज एक होटल हैं और ये एक मकान,मुझे पता हैं उन 10 रुपयों की क़ीमत आज मैं जो भी हूँ उन 10 रुपयों की वजह से हूँ,मुझे पता हैं “पैसे की क़ीमत”, और हाँ वो 10 रुपये मैं वापस नहीं करूँगा। परिवार में आपस में आना जाना शुरू हो गया,सबको पता चल गया दो बिछड़े दोस्त दुबारा से मिल गये हैं। लखनऊ वाला दोस्त बोला जो हमारा पुश्तैनी मकान हैं वो मैं तेरे नाम करता हूँ,एक दिन आकर सब से मिल भी लूँगा और मकान के कागज तेरे को दें दूँगा।

शायरा बानो
कथाकार, प्रवक्ता
जैश किसान इंटर कॉलेज,
घोसी, मऊ

लघु कथा- - आरोही

आरोही बड़ी बेचैन सी रहने लगी थी। ये वही आरोही थी जो बात-बात पर खिलखिलाती और खुश रहती थी। पढ़ाई पूरी करने के बाद बिल्कुल अकेली सी हो गयी थी, चिड़चिड़ापन आने लगा था। न उसका किसी से बात करने का मन होता न ही किसी की बात सुनने का।उसकी चाहतें उसके दिल में ही दबी हुई थीं, जो खामोशी का रूप ले रही थीं। ये उम्र का तकाजा भी था, इस उम्र में हर एक व्यक्ति को साथी की जरूरत होती है जिससे व्यक्ति अपने दिल की बात कर सके। आरोही का अब कोई साथी नहीं था बिल्कुल अकेली पड़ गयी थी मन बड़ा बेचैन सा रहने लगा था। वह इस बेचैनी से निजात पाना चाहती थी। वह एक ऐसे साथी के तलाश में थी जो उसकी भावनाओं को समझे और उसका सहयोगी बने न कि रुढ़ीवादी समाज के परमेश्वर जैसा पति। एक दिन बैठे-बैठे वह खुद को जानने व खालीपन को समझने की कोशिश कर रही थी।खुद को समझने की पुरजोर कोशिश ने आखिरकार ये सोचने पर मजबूर कर दिया कि "क्या वह इन उदासियों, खामोशियों, बेचैनियों में गुम होने के लिये बनी है? उसके जीवन का कोई न कोई उद्देश्य जरूर होना चाहिए वह इतनी लाचार और कमजोर नहीं है!" आरोही के मन में सकरात्मक ख्याल आने शुरू हो गए अब वह सोचने लगी थी क्या जिस तरह मैं खामोश हूं, परेशान हूँ ऐसे खामोश, परेशान लोगों के चेहरे पर हँसी, खुशी नहीं ला सकती? उनके जीवन को मैं आसान बनाने में उनकी मदद नहीं कर सकती? अब वह चीजों को जानना, समझना चाहती थी लेकिन जानने-समझने का रास्ता क्या हो ये समझ नहीं पा रही थी। आखिरकार उसने किताबों व लोगों के व्यावहारिक गतिविधियों की तरफ रुख किया कुछ समय तक आरोही का ये अध्ययन यूँ ही चलता रहा और आरोही ने पाया कि पुरानी आरोही कहीं गुम हो गयी है ये ख्याल आरोही के चेहरे पर एक चमक बिखेर रहा था। आरोही मन ही मन अब खुश हो रही थी। वह खुद को समझदार व प्रोग्रेसिव सोच की धनी पाकर गदगद हो रही थी। अब आरोही समाज में व्याप्त, कुरीतियों व रूढियों पर वार करने के लिए खुद को तैयार कर लेती है। समाज के एक एक रूढ़ियों व कुरीतियों पर अघात करते हुए जीवन बिताने लगती है!

ऐसे ही जीवन बिताते-बिताते उसे एक जीवन साथी आखिर मिल ही जाता है जो बहुत ही समझदार, कर्तव्यनिष्ठ, समाजसेवी, मानवीय मूल्यों से परिपूर्ण अच्छा सहयोगी आदि गुणों से परिपूर्ण था। अब आरोही उस मुकाम पर थी जहां तमाम रूढ़ियों, बुराईयों के विरोध से हो रही तकलीफों से भी कोई तकलीफ महसूस नहीं करती, अब वह आनंदित रहती चेहरा

खुशनुमा दिखाई देता और यहीं नहीं वैचारिक मेल का उसका पति भी हर वक्त खुश रहता। आखिरकार आरोही ने उदासियों, बेचैनियों, खामोशियों को तोड़कर एक शानदार जीवन की शुरुआत कर डाली और मानव सभ्यता के विकास व बेहतरीन समाज के निर्माण की कड़ी बन गयी।

हमन है इश्क़ मस्ताना

डॉ. जियाउर रहमान जाफरी
हिन्दी प्राध्यापक
ज़िला नालंदा, बिहार

ग़ज़ल के मोहब्बत से पैदाइशी रिश्ते रहे हैं। इसका मतलब ही उस स्त्री से बातें करना है जो प्यार और श्रृंगार की बातें करती है। ग़ज़ल का अर्थ हिरण की आंखों से भी इसलिए लगाते हैं कि हिरण की आंखें देखने में खूबसूरत लगती हैं। यह अलग बात है कि वक्त गुज़रने के साथ ग़ज़ल ने इश्क के अलावा दुनिया जहान की बातें करनी भी सुन कर दी। सिर्फ उर्दू ग़ज़ल ही नहीं हिंदी ग़ज़ल में भी प्रेम के तत्व मौजूद हैं। दुष्यंत के पूर्व के तमाम ग़ज़लकारों के विषय तो प्रेम रहे ही हैं,अगर आप हिंदी ग़ज़ल के पुरोधा दुष्यंत को भी देखें तो उनके लगभग हर ग़ज़ल में एक दो प्रेम के शेर मौजूद मिलेंगे।

डॉ.भावना हिंदी की चर्चित गज़लकार हैं, और एक लम्बे अरसे से संपादन और आलोचना से भी जुड़ी हुई हैं। इस बार उन्होंने हमन है इश्क़ मस्ताना नाम से एक ऐसे संकलन का संपादन किया है, जिसमें ख़ालिस प्रेम की ग़ज़लें हैं।ज़ाहिर है इसमें रुमानियत है,पर ग़ज़ल के अपने तक़ाज़े हैं, यहां हुस्न और इश्क़ को पर्दे में रखा जाता है, इसलिए ग़ज़ल का इश्क़ एक मुकम्मल मर्यादा में चलता है। इस किताब का नाम कबीर के उस शेर से लिया गया है, जिसमें कबीर कहते हैं हमन है इश्क मस्ताना हमन को होशियारी क्या?

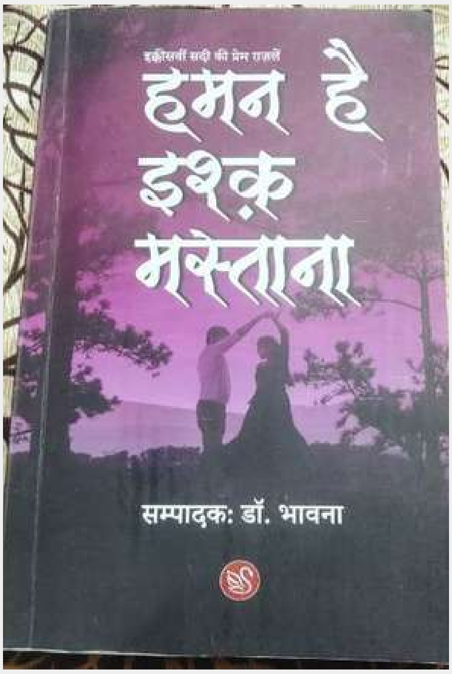

ज़ाहिर है हिंदी ग़ज़ल का एक आलोचक वर्ग कबीर को हिंदी का पहला गज़लकार मानता है। ऐसा नहीं है कि इस संकलन में सिर्फ इधर के शायरों को रखा गया है,बल्कि विरासत के तेहत यहां अमीर खुसरो कबीर,भारतेंदु,जयशंकर प्रसाद, निराला, त्रिलोचन,शमशेर,नीरज दुष्यंत आदि की भी महत्वपूर्ण प्रेम गजलें हैं, जो इस किताब को पूर्ण बनाती है।जहां यह बात मान ली गई है कि हिंदी में ग़ज़लें उर्दू के प्रेम के विरोध में आई है,वहां हिंदी ग़ज़ल की पूरी परंपरा में प्रेम की ग़ज़लों को तलाशना एक कठिन काम था,जिसे संपादक ने पूरी खूबसूरती और ज़िम्मेवारी से पूरा किया है। इस समय के लगभग एक सौ दस से अधिक शायरों ने यहां प्रेम की ग़ज़लें कही हैं,जो अपनी भाषा, शैली,लहजा, प्रस्तुति तथा कथ्य और कहन से अकस्मात हमें अपनी ओर खींच लेती है। कुछ शेर देखें -

कोई किसी से शिकायत करे न प्यार करे
यही है अब तो कोई किसका एतबार करे
-अनिरुद्ध सिन्हा

हमारे गुस्सा होते ही वह हंस कर डाल देती है
गले में प्यार से बांहों का मफलर डाल देती है
-अभिषेक सिंह

बीच मझधार में भी किनारा मिले
उम्र भर साथ मुझको तुम्हारा मिले
-अविनाश भारती

जब कभी प्यार का सिलसिला हो गया
हर सफ़र देखिए खुशनुमा हो गया
-पंकज कर्ण

मैं तुम्हारी महफिलों में बस हवा बन कर रहा
रात भर का साथ था बस मैं दिया बन कर रहा
-राहुल शिवाय

कुछ तो लब से कहा करे कोई
मेरी ख़ातिर दुआ करे कोई

ज़ाहिर है इसमें ऐसे शेर भरे पड़े हैं, जो आपके मर्म को स्पर्श करते हैं, और आपको लगने लगता है कि यह सब आपकी ही बात है। आने वाले वक़्त में ग़ज़ल में जब कभी प्रेम की बातें होंगी,इस किताब के महत्व और मूल्यांकन को नकारा नहीं जा सकेगा।

हमारे हैं इश्क मस्ताना
संपादक- डॉ भावना
प्रकाशक -श्वेतवर्णा प्रकाशन, नोएडा
वर्ष 2025, पृष्ठ -244,मूल्य -399/-

कृतिका सिंह के कार्टून

कृतिका सिंह जी उभरती हुई कार्टूनिस्ट हैं, जीवन के विविध पक्षों पर आपके सीधे हस्तक्षेप करते कार्टून बहुत लोकप्रिय हैं, आप कृतिका जी को उनके फेसबुक पेज Kritika cartoonist (https://www.facebook.com/cartoonistkritika?mibextid=ZbWKwL) पर फॉलो भी कर सकते हैं

प्रस्तुत है कृतिका जी के जीवंत कार्टून :

वीथिका ई पत्रिका :आपसे आपकी बात

वीथिका ई पत्रिका साहित्य, कला, संस्कृति और विज्ञान को समर्पित मासिक ई पत्रिका है. आप हमारे वेबसाइट www.vithika.org से पत्रिका डाउनलोड कर सकते हैं, व लेखों, रचनाओं पर हमें अपने विचार भी भेज सकते हैं. वीथिका ई पत्रिका में प्रकाशित सभी लेख, लेखक के अपने विचार हैं, इनसे या इनके विचारों से पत्रिका या पत्रिका की सम्पादकीय समिति किसी प्रकार की सहमति नहीं रखती.

हमें अपनी रचना या लेख भेजने के लिए आप उसे हिंदी भाषा में टाइप कर हमें जीमेल या whatsapp कर सकते हैं :

Gmail : vithikaportal@gmail.com
whatsapp: 8175800809